International Journal for Multidisciplinary Research (IJFMR)
E-ISSN: 2582-2160 ● Website: www.ijfmr.com ● Email: editor@ijfmr.com

शोध लेख-प्रेमचंद के साहित्य में दलितों की समस्याएं

कुमारी ममता सिंह[1], डॉ. ममता रानी[2]

[1]शोधकर्ता, कलिंगा विश्वविद्यालय, रायपुर, छत्तीसगढ, भारत
[2]शोध निर्देशिका, कलिंगा विश्वविद्यालय, रायपुर, छत्तीसगढ, भारत

सारांश

प्रेमचंद का साहित्य भारत के आम आदमी के जीवन को चित्रित करता है | उनकी कहानियां और उपन्यास का समाज भारतीय जन के नीचले तबके का समाज है | जिसमें दलित, गरीबों, गरीब किसानों और मजदूरों के जीवन के अनेक रंग और रुप विद्धमान है | प्रेमचंद का जीवन काफी संधर्षमय परिस्थितियों से गुजरा जिसका असर उनके साहित्यिक रचनाओं में भी दिखता है | उनकी अधिकांश कहानियों में दलित की समस्याओं को ग्रामीण जनता की आम समस्याओं का एक अंग बनाकर ही चित्रित किया गया है | प्रेमचंद ने अपनी कहानियों का मेन मुद्दा वहां के शोषित- पीडित जन के आर्थिक शोषण और सामाजिक उत्पीड़न को बनाया है |

बीजक शब्द- हिंदी साहित्य ,प्रेमचंद, प्रेमचंद की रचनाएं, दलित समस्याएं

प्रस्तावना

कोई भी साहित्यकार युगीन परिस्थितियों से निश्चित रूप से प्रभावित होता है ,लेकिन उसकव्यक्तिगत जीवन की घटनाएँ भी उसके साहित्य पर असर डालती है।प्रेमचंद का जीवन काफी संघर्षमय परिस्थितियों में गुजरा। इन्हीं परिस्थितियों ने उनके जीवन को हालात को समझने और घटना संकुल बना दिया, जिससे उन्हें जीवन में संघर्ष करने का अदम्य साहस प्राप्त हुआ।

दलित साहित्य वर्तमान का ऐसा विषय बन चुका है जिसका अध्ययन किए बिना सम्पूर्ण हिन्दी साहित्य को समझना ग़लत होगा। दलित साहित्यकारों का मनाना है कि दलित की पीड़ाओं को वही समझ सकता है जिसने इसको भोगा है, यानि कि अनुभूति के आधार पर, जबकि दूसरा खेमा दलितों से इतर लिखे गए साहित्य को, जो दलित जीवन पर उसी भी उसमें शामिल करने की बात कर रहा है। हिन्दी साहित्य के

मुख्यधारा में 'दलित विमर्श' का मुद्दा अस्सी के दशक में उभरा जो नब्बे तक आते-आते काफी चर्चित हो चुका था। साहित्य की बहुचर्चित पत्रिका 'हंस' में दलित साहित्यकार ओमप्रकाश वाल्मीकि की आत्मकथा 'जूठन' धारावाहिक रूप में प्रकाशित हुई जो आलोचकों और पाठकों में बहुत चर्चित हुई। दलित साहित्य में दलित साहित्यकार अपने जीवन के कटु अनुभवों को व्यक्त करते हैं, जिसका एक मात्र उद्देश्य यही है कि पूरी दुनियाँ यह जाने के उनके साथ क्या दुर्व्यवहार हुआ है। विख्यात दलित चिंतक कंवल भारती ने लिखा है- "दलित साहित्य से अभिप्राय उस साहित्य से है, जिनमें दलितों ने स्वयं अपनी पीड़ा को रूपायित किया है, अपने जीवन-संघर्ष में जिस यथार्थ को भोगा है, दलित साहित्य उनका उसी की अभिव्यक्ति का साहित्य है। यह कला के लिए कला का नहीं, बल्कि जीवन का और जीवन की जिजीविषा का साहित्य है।"[1]

दलित साहित्य व्यापक दलित आन्दोलन की रचनात्मक अभिव्यत्ति और उन्हीं लक्ष्यों की प्रप्ति की ओर सामाजिक चेतना को उन्मुख करना दलित साहित्य का उद्देश्य रहा है.जिसमें यह बहुत हद तक सफल भी रहा है.हिंदी के दलित साहित्य की एक बड़ी सफलता यह रही कि इसने हिंदी समाज और साहित्य का एक नए ढंग के यथार्थ और अनुभव से परिचित करवाया. जिस कड़वे और बजबजाते यथार्थ की केवल कल्पना की जा सकती थी.

हिन्दी साहित्य में दलित जीवन की समस्याओं को साहित्य में आरंभ से उठाया जा रहा है। आज़ादी से पहले प्रेमचंद, निराला, यशपाल आदि कहानीकारों ने अपनी रचनाओं में हाशिए के समाज के पक्ष में मज़बूती से लिखा। आज़ादी के बाद जब भारतीय समाज की तस्वीर काफ़ी बदली मार्कण्डेय, अमरकांत, राजेन्द्र यादव, नैमिशराय, ओम प्रकाश वाल्मीकि, पुन्नी सिंह, प्रेम कपाड़िया, डॉ. दयानंद बटोही, डॉ. तेज सिंह, बाबूलाल खंडा, रामचंद आदि चर्चित रचनाकार हैं। महिला कथाकारों में उषा चन्द्रा, रमणिका गुप्ता, रजत रानी 'मीनू', मैत्रेयी पुष्पा, सुभद्रा कुमारी जैसे रचनाकार इसमें शामिल होकर मज़बूत लेखन किया। प्रेमचंद पहले ऐसे साहित्यकार हैं जिनकी रचनाओं में दलित जीवन को प्रमुखता से स्थान मिला है। छुआछूत, जात-पात, आडंबर, कर्म-कांड आदि का वह ख़ूब विरोध करते रहे। उनकी कहानियाँ सद्गति, कफ़न, 'ठाकुर का कुआँ' आदि में दलित जीवन को त्रासदी को बहुत गहराई से अभिव्यक्त किया गया है और साथ ही उनके साथ अन्याय करने वाले ब्राह्मणवादी विचारधारा के लोगों को भी आड़े हाथों लिया है। 'सदगति' में प्रेमचंद ने जहाँ चमारों पर हो रहे शोषण और अत्याचार का मार्मिक चित्रण किया है वहीं 'पूस की रात', 'कफ़न' में दलित प्रतिरोध को साफ़-साफ़ महसूस किया जा सकता है |

प्रेमचंद की विशेषता यह है कि वह हर वर्ग के आर्थिक शोषण के पक्ष को कभी अपनी नजर से ओझल नहीं होने देते।

प्रेमचंद ने रंगभूमि में एक अछूत जाति के पात्र को नायक बनाकर क्रांतिकारी कार्य किया | सूरदासमें गांधी की छवि उतारकर और भी बड़ा काम किया और धर्म-न्यायसत्य की लड़ाई इने के कारण उसे भारत के वीर

त्यागी महापुरुषों की परंपरा से जोड़ दिया। वह अंधा है ,भिखारी है,पर उसकी अंतर्दृष्टि प्रबल है | उपन्यास सभी सवर्ण पात्रा - राजा - महाराजा , शासक , के उद्योगपति आदि सभी उसके सम्मुख श्रद्धासे झुकते हैं तथा उसकी श्रेष्ठता को स्वीकार करते हैं। उपन्यास के अंत में उसका बलिदान गांधी के बलिदान से कम नहीं है। अतःरंगभूमि' तो दलित जाति के नायक को गांधी का प्रतीकबनाकर उसे समाज के शिखर पर स्थापित करती है , न कि किसी जाति का अपमान करती है।सूरदास प्रेमचंद की महान एवं कालजयीसृष्टि है और दलित जाति के लिए तो वह गौरव का केंद्र है| इस प्रकार गोदान में मातादीन- सिलिया के प्रसंग में दलितों द्वारा है। ब्राह्मण मातादीन के मुंह में हड्डी डालने का प्रसंग एक बार फिर प्रेमचंद के दलित-दर्शन के क्रांतिकारी रुप को उदघाटित करता है|

हिन्दी साहित्य के इतिहास में कहानी की यात्रा सबसे अधिक रोमांचक और परिवर्तनशील रही है। समय और समाज की बदलती सोच ने सबसे पहले कहानी को ही बदला। बीसवीं सदी के कुछ वर्ष पूर्व ही आरंभ हुई कहानी का लोकजीवन और लोकभाषा के समन्वय से होता है। इस दौर की कहानियाँ तिलिस्मी और लोककथाओं की आंतरिक संवेदना से पूर्ण थीं। हिन्दी कहानी की यथार्थवादी यात्रा प्रेमचन्द के आगमन से आरंभ होती है। प्रेमचंद ने हिन्दी कहानी को आम जनता के द्वार पर लाकर खड़ा कर दिया। ग्रामीण जीवन की मार्मिक कथा को साहित्य में प्रस्तुति देने के कारण ही प्रेमचंद को कथा सम्राट कहा गया। प्रसाद ने ऐतिहासिक और पौराणिक पात्रों को आधार बनाकर तत्कालीन सामाजिक समस्या को जीवंत किया। उसके बाद नई कहानी, अकहानी, संचेतन कहानी, समांतर कहानी, अकहानी जैसे कहानी युगों ने कहानी की संवेदना और भाषा को कई पड़ावों की यात्रा करवाई। हिन्दी कहानी में दलित जीवन उपेक्षित रहा। दलित पात्रों का सृजन तिरस्कार भाव से हुआ। प्रेमचंद की पूस की रात कफ़न, सद्गति, दूध का दाम, ठाकुर का कुआँ, नशा, मंत्र जैसी कहानियों में दलित जीवन की विडंबनाओं को स्थान मिला ही। कफ़न और सद्गति ने दलित विमर्श में अपनी उपस्थिती दर्ज की लेकिन कुछ दलित कहानीकारों ने इसे दलित कहानी माना ही नहीं।

उनकी कहानियाँ सद्गति, कफ़न, 'ठाकुर का कुआँ' आदि में दलित जीवन की त्रासदी को बहुत गहराई से अभिव्यक्त किया गया है और साथ ही उनके साथ अन्याय करने वाले ब्राह्मणवादी विचारधारा के लोगों

को भी आड़े हाथों लिया है। 'सदगति' में प्रेमचंद ने जहाँ चमारों पर हो रहे शोषण और अत्याचार का मार्मिक चित्रण किया है वहीं 'पूस की रात', 'कफ़न' में दलित प्रतिरोध को साफ़-साफ़ महसूस किया जा सकता है।

पूरी तरह से प्रतिक्रियावादी वर्ण और जाति व्यवस्था ने हजारों वर्षों से भारतीय समाज को परेशान किया है। भारत दुनिया का एकमात्र देश है जहां ऐसी व्यवस्था अस्तित्व में आई और अभी भी मौजूद है। वर्ण और जाति व्यवस्था को हिंदू धर्म और वैदिक ग्रंथों द्वारा पवित्र किया गया था। यही इसके सुदृढ़ीकरण का मुख्य कारण था। कुख्यात पाठ, मनुस्मृति ने तत्कालीन प्रचलित सामाजिक मानदंडों को संहिताबद्ध किया और शूद्रों, अतिशूद्रों और महिलाओं को पूरी तरह से असमान और दयनीय अस्तित्व में डाल दिया। जाति व्यवस्था की विशिष्टता यह थी कि यह वंशानुगत, अनिवार्य और अंतर्विवाही थी। जाति व्यवस्था और उसके सामाजिक उत्पीड़न से सबसे ज्यादा प्रभावित दलित, अतिशूद्र या अनुसूचित जातियां हुई हैं। एक अलग तरीके से, भारत में आदिवासियों या अनुसूचित जनजातियों को भी सदियों से सामाजिक उत्पीड़न का सामना करना पड़ा है। रामायण में शम्बूक और महाभारत में एकलव्य की कहानियाँ प्राचीन भारत में हिंदू समाज की गैर-समतावादी प्रकृति की उत्कृष्ट प्रमाण हैं।

छुआछूत के अभिशाप के साथ-साथ दलितों को किसी भी प्रकार की संपत्ति रखने का भी अधिकार नहीं था। उन्हें सबसे गंदा खाना खाना पड़ता था, जिसमें उच्च वर्णों द्वारा फेंक दिया गया बचा हुआ खाना भी शामिल था; उन्हें सामान्य कुएँ से पानी भरने की अनुमति नहीं थी; उन्हें मंदिरों में प्रवेश करने से प्रतिबंधित कर दिया गया; उन्हें शिक्षा और ज्ञान के अधिकार से वंचित कर दिया गया; उन्हें ऊँची जातियों के लिए छोटे-मोटे काम करने पड़ते थे; उन्हें सामान्य कब्रिस्तान का उपयोग करने की अनुमति नहीं थी; उन्हें उच्च वर्णों के निवास वाले मुख्य गाँव में रहने की अनुमति नहीं थी; और वे भूमि और संपत्ति के मालिकाना हक से वंचित हो गए, जिससे आर्थिक गतिशीलता के सभी स्रोतों तक पहुंच में कमी आ गई। इस प्रकार, सदियों से दलितों को सामाजिक बहिष्कार और आर्थिक भेदभाव दोनों का सामना करना पड़ा। यह किसी न किसी रूप में देश के अधिकांश भागों में आज भी जारी है।

1931-32 में गोलमेज सम्मेलन के बाद जब ब्रिटिश शासकों ने समाज को सांप्रदायिक तौर पर बांटा तो, उन्होंने उस वक्त की अछूत जातियों के लिए अलग से एक अनुसूची बनाई, जिसमें इन जातियों का नाम डाला गया |

इन्हें प्रशासनिक सुविधा के लिए अनुसूचित जातियां कहा गया. आज़ादी के बाद के भारतीय संविधान में भी इस औपनिवेशिक व्यवस्था को बनाए रखा गया. इसके लिए संवैधानिक (अनुसूचित जाति) आदेश, 1950 जारी किया गया, जिसमें भारत के 29 राज्यों की 1108 जातियों के नाम शामिल किये गए थे. हालांकि ये तादाद अपने आप में काफी ज्यादा है |

फिर भी अनुसूचित जातियों की इस संख्या से दलितों की असल तादाद का अंदाज़ा नहीं होता. क्योंकि ये जातियां भी, समाज में ऊंच-नीच के दर्जे के हिसाब से तमाम उप-जातियों में बंटी हुई हैं |

भारत की आजादी के तुरंत बाद यह महसूस किया गया था कि -"आम जनता की घोर गरीबी का कारण यही है कि उसके पास उसकी अपनी कही जानेवाली कोई ज़मीन नहीं है "| समाजवाद में समाज के सारे लोग बराबर होते है कोई उँचा है, न कोई नीता है,

दलित चिंतक चंद्रभानजी ने सामाजिक जीवन का मूल्यांकन करते हुए लिखा है कि - "आज़ादी के बाद बहुत कुछ बदला है, लेकिन जाति के पूर्वाग्रह नहीं बदले, जाति के नाम परहोने वाला दमन तो इन दिनों बढ़ता ही जा रहा है" | भारत सरकार ने 1955 में छूआछूत के विरुध , 1989 में अत्याचार के विरुध और 2015 में कड़ा दलित एक्ट बनाया है |

प्रेमचंद अपने समय से आगे की सोच रखने वाले साहित्यकार थे. उन्होंने जिस दलित चेतना के चित्रण की नींव रखी है. प्रेमचंद के बाद सूर्यकांत त्रिपाठी निराला का उपन्यास 'चतुरी चमार', 'बिल्लेसुर बकरिहा', 'कुल्लीभाट' आदि रचनाएँ दलित चेतना से परिपूर्ण हैं। उनकी कविता 'वह तोड़ती पत्थर' हिन्दी कविता के इतिहास का मील का पत्थर है। इसके साथ ही यशपाल की कहानी 'परदा', राहुल सांकृत्यायन की 'पुजारी', 'प्रभा और सुमेर' भी दलित जीवन की अभिव्यक्ति के रुप में दृषिटगोचर होता है.प्रेमचंद के बाद दलित विषयों पर केंद्रीत कथा कहानियों का आंदोलन छिड़ गया. प्रेमचंद से भी अधिक खुलकर साहसिक लेखनी चलाने वाले साहित्यकार दलितों के उत्पीड़न एन अन्याया को ज्यादा से ज्याद अपनी रचनाओं में स्थान देने लगे. 'अपने-अपने पिंजरे' 'मैं भंगी हूं', 'जूठन', 'तिरस्कृत', 'दोहरा अभिशाप', मुर्दहिया, मणिकणिका, जूठन भाग दो आदि आत्मकथाओं के प्रकाशित होतो ही सबका ध्यान अपनी तरफ़ खींचा। दलित लेखन का आरंभ सबसे पहले मराठी भाषा में ही हुआ, जिसका आधार आंबेडकर की वैचारिकी और उनका जीवन संघर्ष है।

आज दलित साहित्य और दलित साहित्यकार सबसे ऊंचे शिखर पर है | जिस पर समाज को गर्व भी है कि ये समाज को या दृषिटकोण दे रहे है |शायद प्रेमचंद को यह पहले ही महसूस हो गया था कि समाज का रुख बदलने वाला है | और दबे कुचले लोग अब शोषण और दबाव नहीं झेलने वाले है | इसी दूरदृष्टि का परिच उन्हने अपनी कहानियों सदगति, कफन, पूस की रात, ठाकुर का कुआँ, जुर्माना, सवा सेर गेंहूं, दूध का दाम ,घासवाली, मंदिर ,मंत्र,गरीब की हाय, विद्वंस आदि में दलित ,वंचित ,शोषित, पीड़ित वर्ग की उपेक्षा और उनके साथ हो रहे अन्याय, अत्यचार और उनके जीनव संघर्ष की यथार्थ चित्रण किया है|

सदगति कहानी में प्रेमचंद्र की केंद्रीय चिंताओं में दलित भी थे और गरीब भी। सद्गति में उन्होंने दोनों समस्याओं को एक साथ उठाया और दुखी के माध्यम से समाज की सबसे कमजोर नस को छुआ है।

प्रेमचंद्र ने साहित्य के माध्यम से समाज के कुछ वर्गों को उन दु:खों में भागीदार बनाया है जो दु:ख उन्होंने झेले ही नहीं है

कर्मभूमि' उपन्यास में तो प्रेमचंद ने दलितों के लिए अत्यंत संवेदनशील मुद्दे मंदिर प्रवेश की ही समस्या नहीं उठाई, बल्कि दलित कर्म के संगठित होकर संघर्ष करने का भी विसतार से चित्राण किया है। 'कर्मभूमि' में दलित समस्याओं व संघर्षों का चित्राण व्यापक रूप में किया गया है।

'प्रेमाश्रम' में अछूतों से बेगार लिए जाने व किसानों द्वारा भी उनसे अच्छा व्यवहार न किए जाने का चित्राण हुआ है। 'कायाकल्प' में भी दलितों द्वारा बेगार करवाए जाने की प्रथा के प्रतिरोध के स्वर मुखरित हुए हैं। 'कायाकल्प' में प्रेमचंद पहली बार चमारों के लिए मजदूर शब्द का भी इस्तेमाल करते हैं।
'

निष्कर्ष

अगर देखा जाए तो प्रेमचंद का पूरा जीवन उनके चिंतन और संघर्ष की गाथा है | उनके चिंतन में मानववाद , विवेकशील जनतांत्रिक भावना और दलित विमर्श रहा | उनकी हर कहानी और उपन्यास में समाज में व्याप्त किसी न किसी रुढ़ीगत परंपरा का खंडन किया गया है | प्रेमचंद ने दलित की समस्या उनकी आर्थिक दशा और सामंतों द्वार दलितों के शोषण को अपनी कहानी और उपन्यासों का विषय बनाया | उन्होंने समाज को उनके दुख- दर्द से अवगत कराया | दलित को दया और सहानुभूति शब्द से घृणा है | यह हीनता की भावना को तोड़कर दलित अस्मिता को स्थापित करने की ओर अग्रसर है | सदियों से जिसे समाज और साहित्य ने हाशिये पर फेंक दिया गया था | वह अब प्रखर आत्मबोध के साथ दलित के रुप में अपनी अस्मिता का बोध करा रहा है |

संदर्भ सूची

1. भारत में किस हाल में जी रहा है दलित - लेख- आनंद तेलतुंबडे, बीबीसी वेबसाइट
2. दलित साहित्य की भूमिका, कंवल भारती, पृष्ठ 67
3. दलित साहित्य सौंदर्यशास्त्र, ओमप्रकाश वाल्मीकि, वाणी प्रकाशन, पृष्ठ 59
4. प्रेमचंद साहित्य में दलित विमर्श, लेख, प्रो. चमनलाल. जनमत, पत्रिका
5. प्रेमचंद के साहित्य में दलित विमर्श. लेख - साहित्य कुंज- ई-पत्रिका
6. 6.प्रेमचंद की प्रासंगिकता, हंस प्रकाशन, 1985, इलाहाबाद

7. मानसरोवर- प्रेमचंद, खंड आठ, प्रकाशन, इलाहाबाद, 1966